पूज्य लालचंदभाई के प्रवचन
जामनगर, गुजरात
तारीख: ११-१०-१९८८, प्रवचन ४९८ मेसे
परमपारिणामिकभाव,
सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान का संवाद

मुमुक्षुः- मङ्गलं भगवान् वीरो मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम् ॥
सर्वमङ्गलमाङ्ग्ल्यं सर्वकल्याणकारकं।
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम् ॥

अध्यात्मयुग प्रवर्तक महान कहान गुरुदेव की परंपरा में हुए महान विद्वान पूज्य श्री लालचंदभाई की साक्षी में, (पूज्य लालचंदभाई को) परमपारिणामिकभाव स्वरूप के स्थान पर रखकर हम दोनों सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान का स्वांग धारण करके यह संवाद प्रस्तुत करते हैं।

उत्तरः- वे (संध्याबहन) सम्यग्दर्शन का स्वांग धारण कर रही हैं अभी और ये (नीलमबहन) सम्यग्ज्ञान हैं। इन दोनों का वादविवाद होगा। और परमपारिणामिकभाव यहाँ, वह आत्मा है।

मुमुक्षुः- परमपारिणामिकभाव वह तो स्वभाव ही है।

उत्तरः- ये तो स्वांग है, ये सब।

मुमुक्षुः- परमपारिणामिकभाव तो स्वभाव ही है।

मुमुक्षुः- सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान की जोड़ी, कोई नहीं सकता तोड़।

उत्तरः- एक साथ ही हैं न? सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान एक साथ ही प्रगट होते हैं, एक साथ रहते हैं। अब सम्यग्दर्शन बोलता है।

सम्यग्दर्शनः- हे परमपारिणामिकभाव स्वरूप ज्ञायक परमात्मन्! तुम्हें सम्यक् श्रद्धा का प्रणाम स्वीकार हो, स्वीकार हो, स्वीकार हो!

सम्यग्ज्ञानः- हे परमपारिणामिकभाव स्वरूप ज्ञायक परमात्मन्! तुम्हें सम्यग्ज्ञान का प्रणाम स्वीकार हो, स्वीकार हो, स्वीकार हो!

सम्यग्दर्शनः- दोनों मिलकर पुनः पुनः नमस्कार करके आपश्री की साक्षी में हम अपने स्वरूप को प्रगट करते हैं।

सम्यग्ज्ञानः- हे श्रद्धा! मैं आत्मवस्तु को कथंचित् अभेद और कथंचित् भेदस्वरूप जानता हूँ। नित्य-अनित्य, एक-अनेक, अपरिणामी-परिणामी, द्रव्य-पर्याय स्वरूप, उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्, अर्थात् कि वस्तु जैसी है ऐसी दो पहलूवाली जानता हूँ। तू भी मेरी तरह ही वस्तु को ऐसी मान, ऐसी मान!

सम्यग्दर्शनः- ना भाई ज्ञान! ऐसा नहीं बनता। ऐसा तो बनता ही नहीं। उसमें तो मैं मिथ्या हो

जाऊँगी!

सम्यग्ज्ञान:- क्यों? क्यों मिथ्या हो जायेगी? मैं तो द्रव्य-पर्याय स्वरूप को जानता हूँ, उसमें मैं तो सम्यक् रहता हूँ। तू मिथ्या कैसे हो जायेगी? तू मिथ्या होने का भय मत कर। तू भी उसमें ही सम्यक् होगी। क्यों सही है न?

सम्यग्दर्शन:- अरे भाई ज्ञान! जिसमें तू सम्यक् रहता है उसमें मैं भी सम्यक् रहूँ, ऐसा नहीं है। क्योंकि हम दोनों का nature (स्वभाव) अलग-अलग है। मैं तो निर्विकल्प हूँ और मेरा विषय एक ही होता है। और मेरे में सर्वथापना ही होता है, मेरे में कथंचित्पना नहीं होता। मुझे कथंचित् आता ही नहीं है, मुझे जो दिखता है वह सर्वथा ही दिखता है। मैं क्या करूँ? मेरा स्वभाव ही सर्वथा के रूप में ही देखने का है।

सम्यग्ज्ञान:- हाँ श्रद्धा! वह तो ठीक है कि तेरा स्वभाव निर्विकल्प है, तेरे में सर्वथापना ही है।

सम्यग्दर्शन:- इसीलिये ही तो! हे भाई ज्ञान! अनंत-अनंतकाल से मैं अपने सर्वथा शुद्ध, परिपूर्ण, अनंत-अनंत गुणमय अभेद-ज्ञाता स्वभाव को सर्वथा अशुद्ध-अपूर्ण दोषी मानती थी। अब आपश्री की अनंत-अनंत परमकृपा से, आपश्री के शुद्धनय स्वरूप कल्याणकारी मार्गदर्शन से, आपने मेरे पूर्ण शुद्ध स्वरूप, परिपूर्ण कृतकृत्य परमात्मस्वरूप, स्वयं सिद्ध स्वरूप, आहाहा! भगवान आत्मस्वरूप दिखाया है, दर्शाया है। और मैंने भी अपने स्वरूप को ऐसा ही मान लिया है कि मैं तो नित्यनिरावरण-अखंड-प्रत्यक्षप्रतिभासमय परिपूर्ण ज्ञायक परमात्मा हूँ। सर्वथा शुद्ध ही हूँ, पूर्ण ही हूँ, निष्क्रिय शुद्ध ज्ञायकभावरूप ही हूँ, अभेद ही हूँ। मुझे इतना ही दिखाई देता है, उसके अतिरिक्त अन्य कुछ भी मुझे दिखता नहीं। उसमें ही मेरा सम्यक्पना है।

सम्यग्ज्ञान:- ऐसा! तू सर्वथा शुद्ध स्वभाव, परमार्थ स्वभाव से अभेद है, निर्विकल्प है। वाह! बहुत अच्छा। अब मैं तुझे कथंचित् का आग्रह कभी नहीं करूँगा।

सम्यग्दर्शन:- हाँ प्रभु ज्ञान! यदि मुझे कथंचित् में आने के लिये कहोगे तो मैं मिथ्या हो जाऊँगी। और मेरे मिथ्या होने पर तुम भी मिथ्या हो जाओगे। मेरे मरण के साथ ही तुम्हारा मरण भी जानो!

सम्यग्ज्ञान:- ऐसा! ओहोहोहो! तो मुझे ऐसा नहीं करना है। अनंतकाल से मैं भी तेरे सम्यक्पने के बिना मिथ्या रहा हूँ, कथंचित् के पक्ष में रहा हूँ, नित्य-अनित्य का ज्ञाता नहीं हुआ। अब हे श्रद्धा! तू अपने सर्वथा शुद्ध स्वभाव में निश्चल रह। मैं कभी तुझे कथंचित् में नहीं लाऊँगा।

सम्यग्दर्शन:- हाँ भैया ज्ञान! आत्मा तो सर्वथा शुद्ध ही है न? आहाहा! मैं तो परिपूर्ण, निर्विकल्प, अभेद परमात्मा हूँ। मैं तो सर्वथा नित्य ज्ञाता स्वरूप से ही हूँ। हे भाई ज्ञान! अब तुम भी जितना मैं श्रद्धान करती हूँ उतना चैतन्य सामान्य आत्मा है, केवल उसे ही तुम भी आत्मा जानो, सर्वथा द्रव्य को ही जानो। तुम किसलिये पर्याय को जानते हो? वह तो परद्रव्य है न? तुम मेरी बात मानो कि अकेले द्रव्य स्वभाव को ही जानो। तुम भी सर्वथा में आ जाओ न?

सम्यग्ज्ञान:- अच्छा! हे श्रद्धा! जैसे तेरे स्वभाव में सर्वथा एकांत है ऐसा मेरे स्वभाव में सर्वथा एकांत नहीं है। मेरे स्वभाव में तो अनेकांतपना है, कथंचित्पना है, मैं स्याद्वादरूप हूँ। मैं यदि सर्वथा

एकांत में जाऊँ तो मैं मिथ्या हो जाऊँगा, मर जाऊँगा।

सम्यग्दर्शन:- अरे! मैं तो सर्वथा में ही सम्यक् रहती हूँ और तुम सर्वथा में सम्यक् नहीं? तुम उसमें मिथ्या हो जाओगे? मर जाओगे?

सम्यग्ज्ञान:- हाँ! मैं सर्वथा एकांत में सम्यक् नहीं होता। सर्वथा में तू सम्यक् और कथंचित् में मैं सम्यक्। कथंचित् में तू मिथ्या और सर्वथा में मैं मिथ्या। अब तो हम दोनों का सम्यक् होने का काल पक गया है। क्योंकि हमारे ऊपर पूज्य श्री लालचंदभाई जैसा पारिणामिक स्वभाव मिल गया है न? अर्थात् अब तो दोनों के सम्यक् होने का काल पक गया है। इसीलिये तू सर्वथा शुद्ध परिपूर्ण मुक्त अभेद ज्ञायकभाव में ही रह और मैं भी तेरा जो आत्मा है वह ही मेरा आत्मा है, तुझे जो उपादेय है वह ही मुझे उपादेय है। उसमें तो मैं तेरे साथ हूँ, परंतु...

परमपारिणामिकभाव:- परंतु...

सम्यग्दर्शन:- परंतु...

सम्यग्ज्ञान:- परंतु जानने के लिये मुझे तेरे अलावा दूसरा भी पहलू है।

परमपारिणामिकभाव:- है!

सम्यग्दर्शन:- हे ज्ञान! तुम शुद्धनय के स्वरूप में तो मेरे साथ हो। अर्थात् तुम मेरे साथ तो हो न! वह बहुत अच्छा, बहुत सुंदर, परंतु...

सम्यग्ज्ञान:- परंतु क्या? मेरी एक विशेषता है। मेरा स्वभाव ही सविकल्प है अर्थात् सब कुछ जानना। द्रव्य-गुण-पर्याय स्वरूप, उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्, भेदाभेद स्वरूप, कथंचित् रहित और कथंचित् सहित, आत्मा और आत्माश्रित आनंद आदि को जानना ऐसा मेरा सहज स्वभाव है। और जब मैं संपूर्ण वस्तु द्रव्य-पर्याय स्वरूप को जानता हूँ तब ही तू भी सम्यक् नाम पाती है। उससे पहले तो तू भी मिथ्या थी। हे श्रद्धा! तेरे पक्ष से मेरा स्वभाव अकेला निश्चय से स्वप्रकाशक ही है। और ज्ञान की अपेक्षा से, अर्थात् जानने की अपेक्षा से मेरा स्वभाव निश्चय स्वपरप्रकाशक है, और व्यवहार स्वपरप्रकाशक भी है। क्यों ठीक है न?

सम्यग्दर्शन:- ठीक है।

अब परमपारिणामिकभाव सम्यक्श्रद्धा और सम्यग्ज्ञान को आशीर्वाद देता है।

परमपारिणामिकभाव:- निर्दोष सम्यक् श्रद्धा! हे निर्दोष सम्यग्ज्ञान! तुम दोनों एकसाथ मिलजुलकर रहते हो, इसलिये सम्यक् एकांत पूर्वक अनेकांत होता है। वह बहुत अच्छा है। ऐसा ही तुम दोनों का स्वभाव है। सम्यक्श्रद्धा-सम्यग्ज्ञान स्वरूप ज्ञान-दर्शन जयवंत वर्तो। ध्येय पूर्वक ज्ञेय की संधि, स्वरूप वीतराग सर्वज्ञपना जयवंत वर्तो! जयवंत वर्तो!

सम्यक्श्रद्धा-सम्यग्ज्ञान दोनों मिलकर कहते हैं:- हे पारिणामिकभाव, हे परमपारिणामिकभाव स्वरूप परमात्मन्! हे प्रभो! हम दोनों आपके आश्रय से आपकी अनंत-अनंत कृपा से प्रगट हुए हैं। हमारा सर्वस्व तो आप ही हो। हम आपमयी ही हैं।

परमपारिणामिकभाव:- भले तुम दोनों कहते हो कि मेरे आश्रय से सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है, परंतु ऐसा है नहीं। तुम प्रगट होते हो तब तुम्हारा लक्ष मेरे ऊपर है, इसलिये मेरे आश्रय

से सम्यग्दर्शन-ज्ञान प्रगट हुआ, ऐसा उपचार आता है। वास्तव में तो तुम दोनों की पर्याय सत् - तुम्हारे से प्रगट हुई है। हम उसके कर्ता भी नहीं हैं और हम उसके कारण भी नहीं हैं, हम तो जाननहार हैं।

सम्यक्श्रद्धा-सम्यग्ज्ञान दोनों मिलकर कहते हैं:- जाननहार भगवान आत्मा की जय हो! ज्ञायक देव की जय हो! परमपारिणामिकभाव की जय हो!

मुमुक्षु:- स्वयंप्रभु की जय हो!

उत्तर:- सम्यक् एकांत पूर्वक अनेकांत ...

मुमुक्षु:- सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान तत्काल की योग्यता, आपके कारण नहीं?

उत्तर:- ना बिल्कुल नहीं। हमें कारण-वारण कोई कहना मत। वे सब अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार पर्याय प्रगट होती हैं। हम तो अकर्ता और अकारण हैं। आहाहा! हम किसी का कारण-बारण नहीं हैं। पर्याय का कारण पर्याय में, पर्याय का कर्ता पर्याय है, मैं कर्ता-भोक्ता नहीं हूँ। मेरी उपस्थिति में होती है इतना ठीक है, परंतु मेरे कारण होती है, ऐसा है नहीं। ऐसा हमें कहना मत। आहाहा!

मुमुक्षु:- आपकी बात हमें शिरोमान्य है क्योंकि उसमें ही हमारा कल्याण है।

उत्तर:- तो ठीक, कल्याण है!

मुमुक्षु:- शिरोमान्य हुआ तभी तो सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान हुआ। उसमें ही हमारा कल्याण है।

उत्तर:- सही है। उसमें ही कल्याण है।

मुमुक्षु:- भाई! इतना अधिक निरपेक्ष और स्वतंत्र?

उत्तर:- हाँ! दो सत् अलग-अलग हैं भाई! किसी के कारण कोई है नहीं। द्रव्य के कारण पर्याय नहीं है और पर्याय के कारण द्रव्य नहीं है। दो सत् जब प्रत्यक्षपने स्वीकार करेंगे, निरपेक्ष, तब उसके बाद सापेक्ष का व्यवहार आता है, कि आत्मा के आश्रय से होता है, आत्मा की कृपा से हुआ, वह सब व्यवहार कहा जाता है।

मुमुक्षु:- वाह! परमपारिणामिकभाव की करुणा बहुत।